कला के आयाम

कलाकार और ऑडियंस की बातचीत

शेफाली जैन

बातचीत क्या है? आसान सवाल है ना? दो या तीन या चार लोगों के बीच कुछ शब्दों का लेन-देन? कुछ कह पाना, कुछ सुन पाना। एक-दूसरे को समझ पाना? यह तो हुई बातचीत की परिभाषा। पर बातचीत केवल लेन-देन का साधन नहीं, हमारी ज़िन्दगी का ज़रिया है। इसके बिना हम खुशी या दर्द कैसे बाँटेंगे? विचार साझा कैसे करेंगे? रिश्ते कैसे बनाएँगे? प्यार कैसे बढ़ाएँगे, दोस्ती, एकजुटता कैसे मुमकिन करेंगे? मदद कैसे माँगेंगे?

बातचीत किस पर निर्भर है? बोलने और सुन पाने पर? और बोलना और सुनना क्या है?

इस सन्दर्भ में मैं आज जोसफ ग्रिगली का एक आर्टवर्क साझा करना चाहती हूँ। यह काम उनकी सीरीज़ 'कॉन्वर्ज़ेशन विद द हियरिंग' यानी 'सुन पाने वालों से बातचीत' से है। है ना दिलचस्प टाइटल? यहाँ हियरिंग का मतलब है वे लोग जो कानों से सुन सकते हैं। यह टाइटल हमारा ध्यान सुन पाने वाले लोगों पर केन्द्रित करता है। पर शायद तुम सोच रहे होगे कि इसमें क्या बड़ी बात है? जो सुन पाते हैं उनके साथ तो बातचीत मुमकिन है ही ना?

दस साल की उम्र में ग्रिगली एक हादसे में अपने कानों से सुन पाने की काबिलियत खो बैठे। तो सवाल दरअसल हम सुनने वालों पर है। जोसफ और हमारे बीच बातचीत कैसे हो?

चलो उनके आर्टवर्क को समझने की कोशिश करते हैं। शायद यह हमें कुछ बताए। नीचे चित्र में 'व्हाइट नॉइज़' नामक उनका आर्ट इन्सटलेशन है। इसमें बहुत सारे सफेद पोस्ट-इट नोट्स का एक जमावड़ा है – ज़मीन से लेकर छत तक। बड़ा आकर्षक है यह जमाव। अलग-अलग इंक में लिखे होने या फिर अपनी अलग सफेदी के कारण हर नोट सफेद होने पर भी एक हल्की-सी अलग रंगत ले लेता है। इस इन्सटलेशन को देखकर सुकून-सा महसूस होता है मुझे।

क्या हैं ये नोट्स? और इन पर क्या लिखा है?

जोसफ जब भी कहीं चाय पीने जाते हैं तब वे अनजान लोगों से बातचीत शुरू करते हैं। पोस्ट-इट नोट्स के ज़रिए वे 'स्मॉल टॉक' (गपशप) या फिर इधर-उधर की रोज़मर्रा की बातें करते हैं। मसलन, यहाँ की कॉफी कैसी है? आज बहुत गर्मी है ना? वगैरह-वगैरह... शर्त यह है कि हम सुन सकने वालों को उनसे लिखकर ही बातचीत करनी होगी क्योंकि जोसफ तब ही हमारी बात 'सुन' पाएँगे। ऐसा करने के लिए हमें समय निकालना होगा, सब्र बरतना होगा। बातचीत करने के हमारे आदतन तरीकों से अलग तरीके अपनाने होंगे।

जोसफ इन 'स्मॉल टॉक' नोट्स को तीस सालों से इकट्ठा करते आ रहे हैं और उन्होंने इन्हें ही अपने आर्टवर्क का माध्यम बनाया है। ऐसे आर्ट जिसमें आर्टवर्क ऑडियंस को आर्टिस्ट के साथ इंटरैक्ट करने पर मजबूर करने के तरीके अपनाते हैं, 'रिलेशनल आर्ट' कहे जाते हैं। इनमें आर्टवर्क केवल देखने की चीज़ नहीं होती। यहाँ कलाकार और ऑडियंस के बीच की बातचीत ही खुद आर्टवर्क है या फिर आर्टवर्क का माध्यम बन जाती है।

जोसफ रिलेशनल आर्ट क्यों बनाते हैं?

इसका जवाब हमें जोसफ के एक इंटरव्यू में मिलता है। वे बताते हैं कि चूँकि वे सुन नहीं सकते, इसलिए जब वे अपने आर्टवर्क की प्रदर्शनी लगाते हैं या फिर किसी आर्ट इवेंट पर जाते हैं तो उन्हें एक इंटरप्रेटर की ज़रूरत पड़ती है जो संकेत भाषा (साइन लैंग्वेज) में सक्षम हो। जिससे वे अपने आर्ट के बारे में या फिर यूँ ही लोगों से बातचीत कर पाएँ। दुविधा यह है कि आर्ट गैलरीज़ उनके आर्टवर्क तो दिखाना चाहती हैं, पर ऑडियंस से बातचीत करने की उनकी इच्छा या सम्भावना को जगह देने से इन्कार कर देती हैं। इस इच्छा को फिज़ूल या फिर नाजायज़ खर्च बताकर अक्सर टाल दिया जाता है। इस बेदरकारी और नाइन्साफी की वजह

व्हाइट नॉइज़

से जोसफ को खुद अपने खर्च पर एक इंटरप्रेटर को साथ लेकर चलना पड़ता है।

तो जोसफ ने तय किया कि वे सुन सकने वालों को आर्ट के ज़रिए अपनी इस दुविधा का हिस्सा बनाएँगे। जब हमें जोसफ के साथ समय निकालकर, लिखकर बातचीत करनी पड़ती है, तब शायद हमें एहसास होता है कि हमारी दुनिया केवल सुन पाने वालों की सुविधा के लिए बनाई गई है। बड़ी गैर-बराबर है सुविधाओं की उपलब्धि! सड़कें, स्कूल, घर, दुकान, समुद्र-किनारे उन लोगों की सुविधा के लिए बने हैं जो पैरों से चल सकते हैं, जो आँखों से देख सकते हैं, कानों से सुन सकते हैं। जोसफ कहते हैं कि जब भी वे सड़क पार करते हैं उन्हें लगता है यह उनके जीवन का आखिरी दिन है क्योंकि उन्हें केवल अपनी आँखों पर भरोसा करके सड़क पार करनी पड़ती है। किसी भी हॉर्न या गाड़ी की आवाज़ उन्हें सतर्क नहीं कर पाती। पिज़्ज़ा मँगवाने पर सुन सकने वालों के लिए तो बिल्डिंग में इंटरकॉम की सुविधा है, पर ना सुन पाने वालों के लिए कुछ नहीं है। उन्हें खुद ही कोई रास्ता ढूँढना पड़ा। पिज़्ज़ा वाला एक रबर बॉल उनके घर की खिड़की (जो दूसरे माले पर है) पर तब तक मारता है जब तक ग्रिगली उस बॉल को देख नहीं लेते।

जब सारी दुनिया ही सुन सकने वालों को ध्यान में रखते हुए डिज़ाइन की गई है तो जायज़ है कि जोसफ हम सुन सकने वालों को अपने आर्टवर्क के ज़रिए हमारे विशेषाधिकारों का आभास दिलाते हैं। इन विशेषाधिकारों को हमने इतना सामान्य ठहरा दिया है कि हम ये भूल जाते हैं कि ये सामान्य नहीं विशेष हैं, ये सिर्फ कुछ लोगों की सुविधा के लिए हैं।

जोसफ से बातचीत करने के लिए जब हमें लिखना पड़ता है तब हमें एहसास होता है कि बातचीत को हम कितना स्वाभाविक समझते हैं। यह कैसे मुमकिन हो, उस पर गौर करना भूल जाते हैं।

पर जोसफ के आर्टवर्क हमें याद दिलाते हैं कि बातचीत दो तरफा होती है और अगर हमने अपनी ओर से कोशिश नहीं की तो यह नाइन्साफी है!

पिछली बार हमने 'तांत्रिक विविधता' (न्यूरोडाइवर्सिटी) की बात की थी, जूडिथ स्कॉट के आर्ट के सम्बन्ध में। तांत्रिक विविधता का मतलब होता है अलग-अलग तरह की दिमागी बनावट और रफ्तार। जितनी हमारी दुनिया में तांत्रिक विविधता है, उतनी ही संवेदी विविधता (सेंसरीडाइवर्सिटी) भी है। यानी हम सभी में जो बोलने, सुनने, छूने, सूँघने, देखने और महसूस करने की काबिलियत और तरीके हैं वे अलग-अलग हैं। इसलिए इनके आधार पर हम किसी को कम या ज़्यादा सशक्त नहीं ठहरा सकते। स्कॉट और ग्रिगली जैसे आर्टिस्ट हमें इस विविधता को समझने और अपनाने का नजरिया देते हैं।